International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

जयपुर चित्रकला शैली का वर्तमान भारतीय समाज पर प्रभाव का अध्ययन

DURGESH KUMAR

Assistant Professor (VSY), Govt College Bari Rajasthan

प्रस्तावना :–

भारतीय इतिहास में राजस्थान का अपना एक अलग स्थान है। कई छोटे–छोटे राज्यों के सम्मिलित भूखण्ड को पहले राजपूताना कहा जाता था यह नाम कर्नल जेम्स टॉड ने दिया था। राजस्थान अपने शौर्य एवं स्वाभिमान तथा स्वतन्त्रता प्रेम के लिए प्रसिद्ध रहा हैं। यहाँ शौर्यता के साथ–साथ कला को भी प्रोत्साहन मिला है। राजस्थान की चित्रकला अपने आप में अदभूत रही है।

राजस्थानी चित्रकला का विभाजन एवं वर्गीकरण राजस्थानी चित्रकला का विकास एवं निर्माण विभिन्न कलाकारों के सहयोग से हुआ है। राजस्थान में चित्रकला का विकास एवं विस्तार प्राचीन नगर, राजधनियों तथा धर्मिक स्थलों पर हुआ है। राजस्थानी चित्रकला का जन्म ध्र्मपीठों, लोक कलात्मक मिथकों, रिसासतों के कला प्रेमी राजाओं सामंतों, जागीदारों, नगर प्रमुखों एवं कलाकारों के योगदान से हुआ।[8] इसी कारण कलाकारों ने परंपरागत शैलीयों के चित्रा बनाए उन्हीं के आधर पर राजस्थानी चित्रकला का वर्गीकरण इस प्रकार है।[9]

राजस्थानी चित्रशैली भित्ति चित्रों, संग्रहालयों विभिन्न कार्यालयों में बड़े स्तर पर विद्यमान है। जो परम्परा के रूप में प्रागेतिहासिक काल से अब तक स्पष्ट अदृश्य रूप में मौजूद रही है। के. पी. जायसवाल ने राजपूताना की चित्रकला का जन्म ग्याहरवीं शताब्दी में बने उदयादित्य द्वारा एलोरा में बनाए गए चित्रों से माना है। आठवी शताब्दी से पूर्व ही राजपूताना में चित्राकला की अपनी निजि समृद्ध परम्परा रही थी। अजन्ता शैली से प्रभावित गुर्जर–प्रतिहार काल के समय से ही राजपूताना में कला का नया रूप विकसित हुआ जिसे अपभ्रंश शैली कहा गया। अपभ्रंश शैली, जैन शैली तथा पश्चिमी भारतीय शैली के रूप में पद परिवर्तन के साथ राजपूताना चित्रशैली की और प्रविष्ट होती हुई राजस्थानी शैली के रूप में 16वीं सदी में मौलिकता ग्रहण की हालांकि इसका मूल स्त्रोत अपभ्रंश शैली ही था। आनन्द कुमार स्वामी ने राजस्थानी चित्रकला को राजपूत शैली एव पहाड़ी शैलीयों के रूप में मान्यता दी है।

ऐतिहासिक विश्लेषण एवं इतिहास लेखन :–

राजस्थानी चित्रकला के प्रमुख केन्द्र जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़, बुंदी–कोटा, जैसलमेर, उदयपुर और नाथद्वार रहे हैं। यहां के राजकीय एवं सामतों के निजी संग्रहालयों कलाकारों और कला प्रेमियों के कला भण्डारों में सुरक्षित चित्रों का संग्रह विद्यमान है।

राजस्थानी चित्रशैली का निमार्ण मध्ययुग की महान देन रही है। इस समय राजनीतिक उथल–पुथल लम्बे समय तक रही है। इस चित्रशैली के निमार्ण एवं विकास के लिए 15वी सदी से लेकर 19वी सदी तक का काल ऐतिहासिक दृष्टी से महत्वपूर्ण रहा है। राजस्थानी चित्रकला पर अनेक विद्वानों नें मौलिक कार्य किया है। प्रमुख विद्वानों में ओ. डब्लु. जी. आर्कर (इंडियन मिनीयेचर, लंदन 1960) बासिल ग्रे (राजपूत पेंटिंग, ऑक्सफोर्ड 1951) पर्सी ब्राउन

International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

(इंडियन पेंटिंग, ऑक्सफोर्ड 1947) मोती चन्द्र (मेवाड पेंटिंग, बूंदी पेंटिंग, नई दिल्ली 1959) ओ.सी गांगूली (मास्टर पीस ऑफ राजपूत पेंटिंग) कार्ल. ले. खंडेलवाल (n डेवलोपमेंट ऑपफ स्टाईल इन इंडियन पेंटिंग, मद्रास (राय कृष्णदास (मुगल मिनीयेचरस, नई दिल्ली 1955) रोजा रोजा सीमीनो, डॉ. भगवतीलाल, रामनाथ आदि विद्वानों[4] ने राजपूत चित्रकला का ऐतिहासिक अवलोकन कर इस कला के विकास एवं निर्माण में सराहनीय कार्य किया है।
राजपूताना की तात्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव बहुत ज्यादा दिखाई देता हैं राजपूताना की चित्रकला कोमल, चैतन्य, जागरूक और जनसाधरण के अन्तःकरण के बिलकुल समीप और पूर्व परिचित हैं। यह कला हमें राजस्थानी जीवन माधुर्य, गांभीर्य औश्र आत्मानुशासन का पूर्ण ज्ञान कराती हैं यहां की कला का जीवन की सत्यता से कराती है। यहां की कला का जीवन की सत्यता से गहरा सम्बन्ध रहा है। राजस्थानी कला में तेज है, अपनापन है और भावुक हृदय की मौन साधना की बड़ी ही सुन्दर अभिव्यक्ति है।[6]

राजस्थान की समृद्ध रंगचित्रों और विषय वैविध्य जैसी विशेषताओं वाली जयपुर शैली ने रजवाड़ों से लेकर आमजन के सामाजिक जीवन को दर्शाने में इस शैली में विभिन्न भावनाओं को व्यक्त करने वाली मुद्राओं का चित्रण और रंगों का प्रयोग अनूठा है। सरलता, सुंदरता और स्पष्टता के संतुलित संयोजन के साथ जयपुर शैली का कोई बराबरी नहीं है। यहां के शासक ईश्वरी सिंह के समय इस शैली में राजा महाराजाओं के बड़े–बड़े आदमकद चित्र अर्थात पोट्रेट दरबारी चित्रकार साहिब राम कद्वारा तैयार किए गए। इस शैली पर राजस्थान में मुगल चित्रकला का सर्वाधिक प्रभाव रहा है।

महल–हवेलियों के निर्माण के साथ भित्ति चित्रण जयपुर की विशेषता बनी। बड़े पोट्रेट की परंपरा जयपुर शैली की विशिष्ट देन है। सवाई रामसिंह के समय बादल महल में मदरसा–ए–हुनरी की स्थापना की गई।[7]

1. मेवाड़ स्कूल – इस शैली के अन्तर्गत चावड़, उदयपुर, देवगढ़, नाथद्वार आदि शैलीयों और उपशैलियँा आती हैं।
2. मारवाड़ स्कूल – यह शैली जोध्पुर, बीकानेर, जैसलमेर, किशनगढ़, पाली, नागौर तथा धणेराव आदि शैलियों और उपशैलियों से सम्बन्धित है।
3. ढुढ़ाड़ स्कूल – इस शैली में आमेर, जयपुर, शेखावटी, अलवर, उणियार, करौली, झिलाए आदि शैलियां एवं उपशैलियों का सम्बन्ध है।
4. हाड़ौती स्कूल – इस स्कूल के अन्तर्गत बूंदी, कोटा, झलावाड़ आदि शैलियों एवं उपशैलियों के अन्तर्गत आती है। राजपूत शैली का वर्गीकरण अपने आप में स्वतंत्रा एवं स्वयतता लिए हुए है।

जयपुर शैली :–

हमारे अध्ययन केन्द्र जयपुर शैली, कछवाह शैली के नाम से प्रसिद्ध रही है। नरवर के शासक सोड़ादेव के पुत्रा ढोलाराम ने बड़गुजरों को हराकर ढुढाड़ में अपना राज्य स्थापित किया। कोकिल देव ने 1036 में मीणों को हराकर अजमेर जीतकर अपनी राजधनी बनाया तथा सन् 1527 में बाबर के विरुद्ध खानवा की लड़ाई में आमेर के शासक पृथ्वी राव ने युद्ध में भाग लिया था। पृथ्वीराज के बाद 1548 ई. में भारमल आमेर की गद्दी पर बैठा। यही भारमल प्रथम राजपूत शासक था जिसने मुगल सत्ता को स्वीकार कर अपनी पुत्री जोधबाई का विवाह 1562 में अकबर के साथ कर दिया। यह प्रथम राजकुमारी थी जिसके कारण मुगल राजपुत सम्बन्धों में विशेष रूप से राजनैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक व्यवस्था में विशेष बदलाव हुए।[10]

भारमल के बाद राजा मान सिंह उनके बाद मिर्जा राजा जयसिंह आमेर की गद्दी पर बैठा। मिर्जा राजा जयसिंह के समय मुगल उत्तराधिकार का य द्धहुआ। इस समय ही आमेर शैली मुगलों की शैली प्रभावित होकर शाही शैली प्रधान हो गई।12 मिर्जा राजा जयसिंह के बाद 1667–68 में रामसिंह तथा 1668–99 में बिशन सिंह आमेर की गद्दी पर बैठे।[11]

सन् 1709 ई. में राजा जय सिंह आमेर की गद्दी पर बैठा। वह एक प्रतिभा सम्पन्न शासक था। उसने शासन व्यवस्था, विज्ञान तथा भवन कला एवं चित्रकला के विकास में अदभुत योगदान दिया। सवाई जयसिंह के बाद सवाई ईश्वर सिंह (1743-50) राजगद्दी पर बैठा इस समय के प्रसिद्ध चित्रकार माहीराम तथा लाल चितारा थे। इन्होंने जानवरों पशु पक्षियों से सम्बन्धित अनेकों चित्रों का निर्माण किया। इन चित्रों में सजीवता एवं सौम्यता साफ झलकती है। इन चित्रकारों ने मनुष्य तथा जानवरों के भय, दुःख, उल्लास आदि का सफल चित्रांकन किया है। ईश्वरी सिंह के बाद राजा माधोसिंह' (1750-68) के समय जयपुर की चित्रकला में मुगल–प्रभाव कम दिखाई पड़ता है। इस समय शुद्ध राजपूत कलाशैली का विकास देखने को मिलता है।[12]

महाराजा पृथ्वी सिंह (1768-78) के समय अलवर राज्य की स्थापना हुई तथा जयपुर के कुछ कलाकार जैसे कि शिवकुमार व डालूराम अलवर चले गए। लेकिन महाराज प्रतापसिंह के समय (1779-1803) में चित्रकला ने नए युग के प्रवेश किया। इनके दरबार में पचास कुशल चित्राकार विधमान थे। इन कलाकारों ने महाभारत, रामायण कृष्ण लीला, दूर्गा पाठ आदि पाण्डुलिपियों पर क्रमबद्ध चित्रा श्रृंखलाए तैयार की। महाराजा मंगल सिंह (1803-1818), राजा रायसिंह (1835-80)] सवाई माधेसिंह (1880-1922) तथा मानसिंह (1927) के समय राजस्थान राज्य के रूप में भारत में विलय हुआ।[13]

जयपुर शैली के विशेष गुण :–

जयपुर सिटी शैली 16 ईसवी से 19 ईसवी ईिवी तक माना जाता है जयपुर से लिखें जयपुर शैली के अनेकों चित्र शेखावटी में भी 18वीं शताब्दी के मध्यम वर्ग व मध्यम वर्ग के चित्रों के रूप में बने हैं। इससे हमें पता चलता है कि नवलगढ, रामगढ, झुंझुनू और मुकंदगढ आदि स्थानों पर भी इस शैली के चित्र प्राप्त होते हैं यदि वास्तव में देखा जाए जयपुर शैली का विकास महाराजा सवाई जयसिंह के समय शुरू होता है जयपुर राज्य की स्थापना की जाती है वहां के महलों और हवेलियों के निर्माण में हमें इन भित्ति चित्र का निर्माण दिखाईं देता है। जय सिुंह के उत्तराधिकारी ईश्वरी सिंह के समय साहिब राम नामक प्रतिभाशाली चित्रकार जिसने आदम कद चित्र बनाकर चित्रकला की नई परम्परा डाली। जयपुर शैली के चत्रों में भक्ति और श्रृंगार का सुंदर समन्वय मिलता है। कृष्ण लीला राग रागिनी रासलीला के अतिरिक्त पिक आर्ट, हाथियों की लड़ाई के अद्भुत चित्र बनाऐ गए हैं। [14]

जयपुर शैली में नारी पात्रों का उत्तम स्वास्थ्य आखें बड़ी–बड़ी और केश राशि को लम्बे चित्रित किया गया है। उनका चेहरा अण्डाकार भवें किंचित सी उठी हुई। सुड़ौल नाक तथा कपोल जैसे अधर दिखाए गए हैं। नारी पात्रों के वस्त्राांकन में चोली, कुर्ता, दुपट्टा, लहंगा, बेसर, तिलक और जुतियां पायी जाती हैं। पुरुषों के चित्रों में मुछों व लम्बी केश राशि का प्रयोग तथा दाढ़ी विहिन तथा नेत्र बड़े दिखाये गए हैं तथा पगड़ी, कुर्ता, जाया चोगा अंगरसी, पायजामा, जुता, कमरबन्द और पटका सामान्य रूप की पोशाकें चित्रित की गई हैं।[15] मुख्य चित्रों में मुगल शैली के भवनों का प्रयोग के साथ–साथ जयपुर कलाकार उद्यान चित्राण में निपुण थे। उन्होंने उद्यानों में अनेक प्रकार के पेड़ा पौधे पर पक्षियों एवं बन्दरों को बड़ी बारीकी से चित्राण किया है। इनके साथ बतख एवं कौए आदि का चित्राांकन लगभग प्रमुख चित्र पर पूर्ण दक्षता के साथ बना है। सवाई प्रतापसिंह के समय सामुहिक पक्षी चित्रण का प्रयोग किया।[16]

जयपुर शैली में शबीहु, दरबारी दृश्य, रागमाला, कृष्ण की लीलाओं पौराणिक आख्यान, नायिका भेद का चित्रण विशेष तौर पर हुआ। जयपुर संग्रहालय में उपलब्ध रागमाला 17वीं तथा 18वीं ,शताब्दी के पूर्वा (के चित्रित किए हुए हैं। और ये विशिष्ठ चित्राण कला की विशेषता प्रधन हैं। राजपूत शैली का निजस्व समा एवं गहराई रहित चित्राांकन प्राप्त होता है। लेकिन मुगलशैली की रंग विधन तकनीक, छायांकन घना गहरा वातावरण आदि जयपुर शैली में समाहित है। इसके साथ ही एक अन्य चित्र जोकि रागनी गुजरी का है। जोकि आमेर शैली की लगभग सम्पूर्ण रागमाला के रागनी गुजरी के चित्रों में मिलते हैं। इस चित्रा में नायिका वीणा लिये हुए नाचते मोर के पास बैठी है। नीचे संगीत बज रहा है। उफपर झरोखे के पास एक स्त्राी खड़ी हुई है। दूर पेड़ों के पास एक मोर है तथा कुछ दूरी पर एक मन्दिर दिखाई दे रहा है। ये चित्र सिद्ध करते हैं कि सवाई जयसिंह के साथ रागमाला कापफी चित्राण कार्य

हुआ है। इसी श्रेणी का अलिभ ''रागनी केदारों'' चित्रा प्रमुख का है। इस पंख झुला रहा है। कोई राजपुरुष सहचरों के साथ आया है और जोगी को प्रणाम कर रहा है। यह चित्रा 1725 ई. के समय का है।[17]

सवाई प्रताप सिंह (1779–1803) से लेकर रामसिंह (1835–1880) तक के काल में मुगल बादशाहों के चित्रा बड़ी तादाद में बने है। हुमायु को अपनी उंगली पर बाज पंछी को बैठाए चित्रित किया गया है तथा इस चित्र में शबीह के पिछे किला लिखा गया है।[18] यह अवध चित्रशैली की परम्परा का चित्रा है। एक अन्य चित्र में जहांगीर को कुर्सी पर बैठे दिखाया गया है। तथा अन्य चित्रा में कुर्सी के उफपर छत्रा भी दिखाया गया है। इसी प्रकार शाह आलम द्वितीय (1759-1805) एवं मोहम्मद अकबर द्वितीय (1806-37) के चित्र बनाए गए हैं। एक चित्रा में अकबर को युद्ध देखते हुए चित्रित किया गया हैं जिसमु मुगल सेना साधुओं से लड़ रही है। वर्ष 1945 में पाए गए ग्यारह चित्रा जो कि जयपुर शैली परम्परा के हैं पर अंग्रेजी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।[19]

रज्मनामा के चित्रों में अर्जुन, द्रोणाचार्य को प्रणाम करता हुआ दिखाया गया है। दोनों ओर सेंनाएं खडी हैं। राधा–कृष्ण के रथ खड़े हैं। अन्य चित्रों में द्रोपदी स्वयंवर का चित्र अर्जुन द्वारा मतस्य वध का चित्राण है। एक चित्र में फकीर के आश्रम का चित्र है। इन चित्रों में आकृतियां लम्बी बनी हैं। यह प्रोविंशियल मुगल शैली का चित्र है।[20]

इसके साथ ही कृष्ण कथा तथा जैन परम्परा के समन्वय प्रधन चित्र बने हैं क्योंकि कई चित्रों में नेमिनाथ के साथ कृष्ण को दिखाया गया है। दोनों को होली खेलते दिखाया गया है। इन चित्रों पर भी जैन प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता हैं लेकिन जैन शैली एवं जयपुर शैली पर मेवाड़ कल्प का प्रभाव था लेकिन डा. आनन्द कुमार ने इनकी पहचान जयपुर कला शैली से की है। वास्तविकता यह है कि इन चित्रों का वर्ण विधान, रंग संयोजन मेवाड़ शैली के अधिक नजदीक है।[21]

उपसंहार :–

भारतीय चित्रकला की सर्वश्रेष्ठ चित्रशैली अजंन्ता एलोरो की गुपफाओं की चित्रशैलियां रही हैं। इनसे ही चित्रकला का उद्भव एवं विकास हुआ है। अपनी इन पूर्ववती शैलियों से प्रभावित होती हुई तथा अनेक समकालिन शैलियों से प्रभावित एवं परवर्ती शैलियों को प्रभावित करती हुई राजस्थानी चित्रकला ने विभिन्न राजपूताना के राज्यों में पोषित होने वाली शैलीयों एवं उपशैलियों का रूप धरण कर चित्रकला जगत को विशेष रूप से समृ(किया। इस शैली ने जयपुर, शैली के स्वतंत्र एवं मुगलिया प्रभाव के अंर्तगत पूर्ण अंकन की महान परम्परा के प्रभावपूर्ण सतरंग राध कृष्ण के गुलाबी सौन्दर्य अंकन शैली से राजस्थानी चित्रकला का जो प्रारूप सम्मुख आता है वह जैसा कि कुमार स्वामी ने कहा है, भारतीय चित्रकला का उत्कृष्ट स्वरूप है तथा विश्व की महान् शैलियों में स्थान पाने योग्य है। इस प्रकार अपने आप में यह शैली स्वतंत्र, भव्य एवं सुकोमल लावण्य प्रधान शैली है।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. सुरेन्द्र सिंह चौहान – राजस्थानी चित्राकला, पुर्वोक्त, पृ. 48–49
2. नवीन खन्ना – इंडियन मैथडोलोजी थ्रू द आर्ट एंड मिनीएचर्स, अरावली बुक्स इंटरनैशनल प्र.ली., न्यू दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2013, पृ. 102–103
3. वहीं, पृ. 104–105
4. जयसिंह नीरज – राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्णकाव्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1976, पृ. 46–47
5. नवीन खन्ना – उपरोक्त पृ. 104–105
6. सुरेन्द्र सिंह चौहान – राजस्थानी चित्रकला, पूर्वोक्त, पृ. 49–50
7. वहीं, पृ. 50
8. ममता चतुर्वेदी – मिर्थ ऑपफ जयपुर वॉल पेंटिंग्स, पबिलकेशन सेम, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2000 पृ. 51–52
9. वहीं, पृ. 60–62

10. जयसिंह नीरज – राजस्थानी चित्रकला, पूर्वोक्त, पृ. 48–50
11. आनन्द कुमार स्वामी – राजपूत पेंटिग, फारवर्ड बाई कार्ल, जे खण्डेलवाल, वॉल्यूम 3, पब्लिकेशन मातीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना, प्रथम संस्करण 1961 पृ. LXVIIC
12. वहीं, पृ. LXVIII
13. कर्नल जेम्स टॉड – अनॉल्स एंड एंटीक्विटीज़ ऑपफ राजस्थान, एम.एन.पब्लिकेशन नई दिल्ली, 1978 पृ. 1–2
14. रायबहादुर, गौरीशंकर हीराचन्द औझा – राजपूताने का प्राचीन इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, तृतीय संस्करण 2009 पृ. 66–67
15. वहीं, पृ. 67
16. मरूभारती अगस्त 1954 – (जन्माष्टमी–स.) 2011 वोल्यूम 1–3, 1953–55 स. अगरचन्द नाहटा, झाबरलाल शर्मा, कन्हैयालाल सहल, डॉ. सुधेन्द्र, प्रबन्ध सम्पादक, आचार्य नित्यानंद, पृ. 82
17. वहीं, पृ. 83–84
18. डॉ. जयसिंह नीरज, डा. बी.एल. शर्मा (सं.द्ध– राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण 1989, पृ. 84–85
19. वहीं, पृ. 85–87
20. सुरेन्द्र सिंह चौहान – राजस्थानी चित्रकला, राहुल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली 1994, पृ. 45
21. कर्नल जेम्स टॉड – अनॉल्स एंड एंटीक्विटीज़ ऑपफ राजस्थान, पूर्वोक्त पृ. 32
22. वहीं. पृ. 35
23. सुरेन्द्र सिंह चौहान : पूर्वोक्त पृ 48
24. रोजा मारिया सिमीनो – वॉल पेंटिंग्स ऑपफ राजस्थान (आम्बेर एंड जयपुरद्ध, आर्यन बुक्स इंटरनैशनल, न्यू दिल्ली, 2001, पृ. 1–2
25. वहीं, पृ. 4–5